इन्दौर (भारत)
अगस्त २४, २०००

सन्देश संख्या २८

धार्मिक मनोवृत्तियाँ

बौद्ध मनोवृत्ति का अभिप्राय यह है कि मैं अपने मुक्तिदाता के रूप में बुद्ध में विश्वास करता हूँ अतः वे मुझे दुःख–दर्द, प्राणान्तक पीड़ा एवं यंत्रणा से मुक्ति दिलायेंगे।

ईसाई मनोभाव में यह अन्तर्निहित है कि मैं ईसा मसीह में विश्वास करता हूँ, अतः वे प्रकट होकर मेरी रक्षा करेंगे और मानवता के विरूद्व किये गये मेरे समस्त पापों व अपराधों के बावजूद मुझे स्वर्ग की चिरस्थायी सुख–शांति के भोग के लिये वहाँ स्थापित कर देंगे।

मुस्लिम मानसिकता सुनिश्चित करती है कि मैं सर्वशक्तिमान अल्लाह में विश्वास करता हूँ, जो स्वर्ग के सिंहासन पर तेजस्वी महाराजा के समान विराजमान होकर कुरान एवं हदीस की जैसी व्याख्या मुल्लाओं और विद्वानों द्वारा की गयी है, के अनुसार लोगों को पुरस्कार एवं दंड देते हैं। अतः मैं इन मुल्लाओं के इशारे पर अल्लाह के नाम पर कुछ भी करने के लिए तैयार हूँ।

हिन्दू मनोवृत्ति इंगित करती है कि मैं छद्मवेशी गुरूओं और गिरियों, स्वामियों और संन्यासियों, महन्थों और महामण्डलेश्वरों, महर्षियों और भगवानों, असंख्य देवी–देवताओं के उपासकों और भक्तों, परमाचार्यों और परमहंसों, ईश्वर और अतीत के लोकप्रिय धर्मज्ञों के अवतारों, योगियों, तांत्रिकों, चिकित्सकों, ज्योतिषियों, चमत्कारियों, पुरोहितों, हवनकर्ताओं, बाबाओं तथा माताओं आदि के विभिन्न प्रकार की सम्मोहक शक्तियों के जाल में फँसने को तैयार बैठा हूँ। सांत्वना और सुरक्षा, शक्ति और लाभ पाने की चाहत मुझे आध्यात्मिक मण्डी के इन धूर्तों के सफेद झूठों, पावन अवधारणाओं एवम् भारी भरकम शब्दावलियों के भँवरजाल में फँसाती है।

सामान्यतः धार्मिक मनोवृत्ति का अभिप्राय है कि मैं धर्मभीरू हूँ, अतः ईश्वर अपने इस भीरू तथा आज्ञाकारी सेवक को वह सब कुछ प्रदान करेगा जिसकी इसे लालसा है।

इस प्रकार की समस्त मनोवृत्तियाँ मुझे अपने मानसिक कारागार में कैद रखती हैं, फलस्वरूप मैं इसे तोड़कर बाहर निकलने की आवश्यकता ही नहीं महसूस कर पाता हूँ। इस कैद से मुक्ति ही क्रियायोग का सार है। मन के अन्दर ही कैद होने के कारण मुझमें अपने अहंभाव की गतिविधियों के सम्बन्ध में अन्तर्दृष्टि प्राप्त करने की कोई पहलशक्ति नहीं रह जाती है और मैं अपने मन के आत्मसंरक्षी यंत्ररचना द्वारा संपोषित आत्मकेन्द्रित गतिविधियों को सही दिशा देकर ज्योतिर्मय बनाने के योग्य नहीं रह जाता हूँ। जब मैं संगठित धर्मों, पंथों एवं सम्प्रदायों, गुह्य विद्या एवं तान्त्रिक समूहों, मिशन एवं संस्थाओं, पुस्तकों एवं प्रचार–अभियानों की शक्तियों से निर्मित मानसिक कारागार से बाहर निकलता हूँ, तब समझदारी की ऊर्जा का विलक्षण आविर्भाव होता है। ये विखंडनकारी शक्तियाँ मेरे मानसिक प्रदूषण एवं विरोध, सुख एवं दुख, लोभ एवं भय आदि मनोभावों के शोषण से पुष्पित–पल्लवित होती हैं।

क्रियायोग का उद्देश्य इन समस्त मनोवृत्तियों, मनोभावों एवं मानसिकताओं को समाप्त कर अपनी सहजावस्था की पूर्ण प्रशान्ति एवं समझदारी में स्थित होना है। जड़ मन, जो अपनी हठधर्मिता के कारण 'निर्मनावस्था' की ओर बढ़ने से इंकार कर देता है, के लिए क्रिया–अभ्यास का कोई महत्व नहीं है क्योंकि 'निर्मनावस्था' की निष्कपटता एवं शून्यता ही परम पुण्य एवं पूर्णता है।

जय चितिशक्ति